ग्रन्थमाला ‘स्वभावदोष एवं अहं निर्मूलन’ : खण्ड १

स्वभावदोष (षड्रिपु)-निर्मूलनका महत्त्व एवं गुण-संवर्धन प्रक्रिया

हिन्दी (Hindi)

संकलनकर्ता

सच्चिदानंद परब्रह्म डॉ. जयंत बाळाजी आठवले

भूतपूर्व सम्मोहन उपचार-विशेषज्ञ (वर्ष १९७८ से १९९४)

सनातन संस्था

卐 सनातनके ग्रन्थोंकी भारतकी भाषाओंके अनुसार संख्या 卐

मराठी ३४४, अंग्रेजी २०१, कन्नड १९९, हिन्दी १९६, गुजराती ६८, तेलुगु ५४, तमिल ४३, बांग्ला ३०, मलयालम २४, ओडिया २२, पंजाबी १३, नेपाली ३ एवं असमिया २

अगस्त २०२४ तक ३६६ ग्रन्थोंकी १३ भाषाओंमें ९७ लाख ३३ सहस्र प्रतियां !

अनुक्रमणिका

अध्याय १ : स्वभावदोष (षड्रिपु)-निर्मूलनका महत्त्व १२

१. मन १२

२. संस्कार ३. स्वभाव १५

४. स्वभावदोष (षड्रिपु)-निर्मूलन प्रक्रिया १९

५. स्वभावदोष-निर्मूलन सम्बन्धी कुछ भ्रांतियां १९

६. स्वभावदोष-निर्मूलन सम्बन्धी भ्रांतियोंके मूल कारण २०

७. जीवन सुखी बनानेके लिए स्वभावदोष-निर्मूलनका महत्त्व २३

८. स्वभावदोष एवं सन्त ४०

९. स्वभावदोष-निर्मूलनके लाभ ४१

१०. समष्टि जीवन सुखी होनेमें स्वभावदोष-निर्मूलनका महत्त्व ५७

११. समष्टि जीवन सुखी एवं समृद्ध बनानेके उपाय ५९

१२. मरणोत्तर लाभ ६३

१३. स्वभावदोषसम्बन्धी कुछ जिज्ञासुओंकी शंकाओंका समाधान ६४

अध्याय २ : गुणसंवर्धन प्रक्रिया ६६

१. परिभाषा २. ध्येय ६६

३. प्रक्रियाका महत्त्व एवं प्रक्रियासे होनेवाले लाभ ६७

४. प्रक्रियाका उद्देश्य ५. प्रक्रियाके चरण ६८

६. प्रक्रिया आचरणमें लाते समय ध्यान देनेयोग्य बिन्दु ८३

७. प्रक्रिया अल्पावधिमें सफल होनेके लिए आवश्यक गुण ८४

८. गुण बढानेके प्रयास करनेसे साधकोंको हुई अनुभूतियां ८६

‘सुखी जीवन एवं उत्तम साधना हेतु स्वभावदोष-निर्मूलन एवं गुण-संवर्धन’ ग्रन्थमालाकी संयुक्त भूमिका

सुखी जीवनयापनमें ‘स्वभावदोष’ बडी बाधा

‘मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।’ इस वचनके अनुसार ‘मन ही मनुष्यके बन्धनका (जन्म-मृत्युके चक्रमें उलझनेका) एवं मोक्षका (जन्म-मृत्युके चक्रसे मुक्त होकर सुख-दुःखके परेके आनन्द एवं शान्ति की नित्य अनुभूति प्राप्त होनेका) कारण है ।’ व्यक्तित्वके स्वभावदोष, व्यक्तिके दुःखका; जबकि गुण, व्यक्तिके सुखका कारण होते हैं । दैनिक जीवनके विविध प्रसंगोंमें हमसे होनेवाले आचरणसे हमारे गुण-दोष ज्ञात होते हैं । स्वभावदोषोंके कारण जीवनमें पग-पगपर संघर्ष एवं तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है । अनेक बार जीवनमें तनाव निर्माण होनेपर उसके लिए आसपासके वातावरण, परिस्थिति तथा अन्य व्यक्तियोंके स्वभावदोषोंको उत्तरदायी माना जाता है; किन्तु उसका मूल कारण, अर्थात स्वयंके स्वभावदोषोंको ढूंढनेका प्रयास ही नहीं किया जाता, जिसके कारण स्वभावदोष वैसे ही बने रहते हैं । परिणामतः मनको शान्ति नहीं मिलती । अतएव जीवन सुखी होनेके लिए स्वभावदोषोंकी बाधा दूर करना अनिवार्य है ।

आदर्श व्यक्तित्व विकसित करनेकी आवश्यकता

जीवनके किसी भी कठिन प्रसंगमें मानसिक सन्तुलन खोए बिना, प्रसंगका धैर्यपूर्वक सामना कर पाने तथा सदैव आदर्श कृति होनेके लिए व्यक्तिका मनोबल उत्तम एवं व्यक्तित्व आदर्श होना आवश्यक है । स्वभावदोष व्यक्तिका मन दुर्बल करते हैं, जबकि गुण आदर्श व्यक्तित्व विकसित करनेमें सहायक सिद्ध होते हैं । इसीलिए आदर्श व्यक्तित्व विकसित करने हेतु, व्यक्तित्वके स्वभावदोषोंका निर्मूलन कर गुणोंका संवर्धन करना आवश्यक है ।

स्वभावदोष आध्यात्मिक उन्नतिमें भी बाधक

ईश्वरप्राप्तिके प्रयासोंमें, अर्थात साधनामें भी स्वभावदोष (षड्रिपु) प्रमुख बाधा है । काम-क्रोधादि षड्रिपुओंके प्रभावसे अनेक महान तपस्वी मुनिश्रेष्ठोंका एवं पुण्यवान राजाओंका परमार्थपथसे पतन हुआ, ऐसे अनेक उदाहरण पुराणोंकी कथाओंमें पाए जाते हैं । स्वभावदोषोंके माध्यमसे षड्रिपुओं का प्रकटीकरण होता है । साधनासे प्राप्त ऊर्जा, स्वभावदोषोंके कारण होनेवाली चूकोंसे व्यय हो जाती है । स्वभावदोष जितने अधिक होंगे, उतनी ही व्यष्टि एवं समष्टि साधनामें होनेवाली चूकें अधिक होंगी और चूकें जितनी अधिक, हम ईश्वरसे उतना ही दूर जाते हैं । जिस प्रकार जलपर काईकी सतह जमनेपर सूर्यकी प्रकाशकिरण जलके तलतक नहीं पहुंच पाती, उसी प्रकार स्वभाव-दोषोंसे, ईश्वरीय चैतन्य ग्रहण न कर पानेके कारण, साधक ईश्वरीय कृपासे वंचित रहता है । सच्चिदानन्दमय ईश्वरसे एकरूप होना, किसी भी योगमार्गके अनुसार साधना करनेवाले साधकका ध्येय होता है । जिस प्रकार तेलकी एक बूंद, अपने गुणधर्मकी भिन्नताके कारण जलसे एकरूप नहीं हो सकती; उसी प्रकार स्वभावदोषोंका निर्मूलन एवं गुणोंका संवर्धन किए बिना, साधक दोषरहित एवं सर्वगुणसम्पन्न ईश्वरसे एकरूप नहीं हो सकता । इसीलिए साधनामें आनेवाली षड्रिपुओंकी बाधाओंको दूर कर, ईश्वरसे एकरूप होनेके लिए स्वभावदोष-निर्मूलन एवं गुण-संवर्धन करना आवश्यक है ।

साधनाके साथ स्वभावदोष-निर्मूलनके प्रयास करना आवश्यक

अधिकांश साधकोंकी ऐसी धारणा होती है कि साधनासे स्वभावदोषोंका (षड्रिपुओंका) निर्मूलन अपनेआप होता है । यद्यपि तत्त्वतः यह अनुचित न हो, तब भी प्रत्येकके विषयमें यह प्रक्रिया सहज होगी, यह निश्चितरूपसे नहीं कहा जा सकता । यह साधनाका ध्येय, ईश्वरप्राप्तिकी उत्कण्ठा, अन्तःकरणमें निर्माण हुआ ईश्वरसम्बन्धी केन्द्र, प्रत्यक्ष साधना इत्यादि विभिन्न घटकोंपर निर्भर करता है । साधनाका उद्देश्य ही षड्रिपुओंका निर्मूलन करना है, अर्थात 'सर्व प्रकारकी क्रिया-प्रतिक्रियाओंपर नियन्त्रण प्राप्त करना

है ।' तब भी स्वभावदोष अर्थात चित्तमें विद्यमान जन्म-जन्मके संस्कार इतनी गहराईतक पहुंच चुके होते हैं कि साधनाद्वारा उनका शीघ्र निर्मूलन सहज सम्भव नहीं होता । साधनाद्वारा आध्यात्मिक उन्नति कर मनोलय एवं बुद्धिलय होनेतक, अर्थात चित्तके सभी संस्कार समाप्त होनेतक मन एवं बुद्धि कार्यरत रहती है। अत: स्वभावदोष भी जागृत रहते हैं। ऐसेमें साधकके निकटके लोगोंको लगता है कि 'यह साधना करता है, तब भी इसके स्वभावमें परिवर्तन क्यों नहीं होता ?' मनमें आनेवाले नकारात्मक विचार एवं विकल्पोंके कारण साधनासे आनन्दप्राप्ति नहीं होती, जिससे साधकके मानसिकरूपसे निराश होनेकी आशंका भी अधिक होती है । अत: 'साधनाद्वारा स्वभावदोष अपनेआप नष्ट होंगे', ऐसा विचार न कर स्वभावदोष-निर्मूलनके लिए सोच-समझकर प्रयास करना अपरिहार्य है । स्वभावदोषोंका निर्मूलन एवं गुणोंका संवर्धन कैसे करें, इस विषयमें विस्तृत जानकारी इस ग्रन्थमालामें दी है ।

राष्ट्रकी दयनीय स्थिति दूर करनेके लिए सुसंस्कारी समाजमनकी आवश्यकता

व्यक्ति एवं समाजका स्वास्थ्य एक-दूसरेपर निर्भर करता है । व्यक्तिगत जीवनपर सामाजिक परिस्थितिका प्रभाव पडता है । जिसके कारण व्यक्तिके सुखका विचार करते समय समाजके, साथ ही राष्ट्रके सुखका विचार करना आवश्यक है । प्रचलित समाजव्यवस्थामें अनेक दुर्गुणोंका प्रादुर्भाव हुआ है। दैनिक जीवनमें पग-पगपर हमें यह अनुभव होता है । शासक, जनता, कर्मचारी एवं धार्मिक नेता, इन चार महत्त्वपूर्ण और मूलभूत समाजघटकोंमें स्वभावदोष बढ जानेके कारण, केवल राजनीतिक क्षेत्र ही नहीं; सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि सभी क्षेत्र न्यूनाधिक मात्रामें दूषित हो गए हैं । समस्त राष्ट्रवासियोंको धर्म एवं नीतिका विस्मरण हो चुका है । धर्म एवं नीतिके घोर अपमानके कारण, राष्ट्रकी यह स्थिति हुई है । पूरी समाजव्यवस्थाको सुव्यवस्थित करनेके लिए स्वयंके दुर्गणोंका निर्मूलन एवं गुणोंका संवर्धन करना समाजके प्रत्येक घटकका प्रथम कर्तव्य है । समाजकी

हृदय-विदारक वस्तुस्थिति, उसके लिए कारणभूत घटक, समाजव्यवस्था सुव्यवस्थित करने हेतु किए जानेवाले उपाय, समाजके घटकोंमें आन्तरिक एकता निर्माण करनेके लिए स्वभावदोष-निर्मूलनका महत्त्व, इसीके साथ धर्म तथा जीवनका समन्वय कर, समाजमनको सुसंस्कारित करने हेतु आवश्यक गुणोंका संवर्धन कैसे किया जा सकता है इत्यादि विषयबिन्दुओंका विस्तृत विवेचन इस ग्रन्थमालामें किया गया है ।

साधकोंद्वारा किए गए प्रयास एवं अनुभूतियां

वर्ष २००३ से सनातन संस्थाने संस्था-स्तरपर यह प्रक्रिया कार्यान्वित करनेके लिए कहा । जिसके उपरान्त साधकोंने स्वभावदोष-निर्मूलन हेतु प्रयास किए । यह प्रक्रिया कार्यान्वित करते समय साधकोंद्वारा हुई त्रुटियां दूर कर, पाठक उनके प्रयासोंसे एवं उन्हें हुई अनुभूतियोंसे बोध ले सकें, इस हेतु इन त्रुटियों एवं अनुभूतियोंका उल्लेख भी इस ग्रन्थमालामें किया है। स्वभावदोष-निर्मूलनकी प्रक्रिया करते समय साधकोंके सामने आई बाधाओंपर समाधान देनेके साथ ही साधकोंकी प्रातिनिधिक शंकाओंका समाधान करनेवाले विषयबिन्दु भी इस ग्रन्थमालामें अन्तर्भूत किए हैं ।

प्रार्थना

इस ग्रन्थमालाका अध्ययन कर पाठकोंको 'स्वभावदोष-निर्मूलन एवं गुण-संवर्धन प्रक्रिया' कार्यान्वित करनेकी प्रेरणा मिले, यही श्रीगुरुचरणोंमें प्रार्थना है ! – **संकलनकर्ता**

टिप्पणी १. विषय पूर्ण होनेकी दृष्टिसे ग्रन्थमें अन्य सन्दर्भग्रन्थोंसे तथा लेखनसे कुछ सूत्र लिए हैं । ऐसे सूत्रोंके अन्तमें कोष्ठकमें छोटे आकारमें सन्दर्भक्रमांक लिखे गए हैं एवं उसका विवरण ग्रन्थके अन्तमें सन्दर्भसूचीमें दिया गया है ।

२. ग्रन्थमें अनेक स्थानोंपर 'प.पू. डॉक्टर' अथवा 'प.पू. डॉ. आठवले', ऐसा उल्लेख ग्रन्थके संकलनकर्ताओंमेंसे 'सच्चिदानंद परब्रह्म डॉ. जयंत बाळाजी आठवलेजी'के सन्दर्भमें है ।

किसी व्यक्तिके सुख-समाधानका विचार करते समय 'स्वभाव' इस घटकका प्रमुखतासे ध्यान रखना आवश्यक है । व्यक्तिके आचरणसे उसके स्वभावका परीक्षण किया जा सकता है । व्यक्तिका आचरण उसकी वृत्तिपर निर्भर करता है । वृत्ति व्यक्तित्वके गुण-दोषोंसे प्रभावित होती है । स्वभावदोष व्यक्तिके सुख-समाधानमें बाधक होते हैं, जबकि गुण पूरक होते हैं । स्वभावदोषोंके कारण व्यक्तिगत जीवन तनावग्रस्त होता है । व्यक्तिके स्वभावदोष सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्वास्थ्यमें भी बाधक सिद्ध होते हैं । जिसका व्यक्तिगत जीवनपर भी दुष्परिणाम होता है । इन सभी कारणोंसे सुखी एवं समाधानी जीवन व्यतीत करने हेतु स्वभावदोषोंका निर्मूलन एवं गुणोंका संवर्धन करना अपरिहार्य है ।

कोई भी कृति करनेसे पूर्व उसे करनेका शास्त्रीय आधार हम बुद्धिसे समझ लें, तो प्रभावीरूपसे मन उसका महत्त्व समझ पाता है । अतः शास्त्र समझकर किया गया कृत्य अधिक मनःपूर्वक होनेके कारण प्रभावकारी होता है । स्वभावदोषोंसे होनेवाली असीम हानि तथा उनके निर्मूलन एवं गुण-संवर्धन से, विविध स्तरोंपर होनेवाले लाभ समझ लेनेपर, स्वभावदोष-निर्मूलन एवं गुण-संवर्धनका महत्त्व मनपर प्रभावीरूपसे अंकित किया जा सकता है । इससे यह प्रक्रिया नियमित, निरन्तर एवं प्रभावीरूपसे कार्यान्वित करनेमें सहायता होगी।

प्रस्तुत ग्रन्थके 'अध्याय १ - स्वभावदोष-निर्मूलनका महत्त्व'में मनका कार्य; संस्कारोंकी निर्मिति; स्वभावदोष-निर्मूलनके विषयमें भ्रान्तियां तथा उनके कारण; स्वभावदोषोंके कारण व्यक्तिगत जीवनमें होनेवाली हानि आदि सूत्र विस्तृतरूपसे दिए गए हैं । विविध योगमार्गोंमें स्वभावदोषोंके कारण होनेवाली हानि, व्यष्टि एवं समष्टि साधनामें होनेवाली असीम हानि इत्यादिके विषयमें विस्तृत जानकारी भी दी है । इसीके साथ स्वभावदोष-निर्मूलनसे व्यक्तिकी व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक उन्नतिमें बाधा निर्माण करनेवाली अनिष्ट शक्तिकी पीडाका निवारण होनेका अध्यात्मशास्त्र, स्वभावदोषोंसे उत्पन्न सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याओंके कारण तथा उन समस्याओंके

निराकरण हेतु किए जानेवाले सर्वांगीण उपाय इत्यादि सूत्रोंका भी विवेचन किया है । ग्रन्थकी पृष्ठसंख्यामें वृद्धिके भयसे इस प्रक्रियाकी विस्तृत जानकारी इस खण्डमें अन्तर्भूत करनेके स्थानपर इस ग्रन्थमालाके दूसरे खण्डमें दी है ।

जीवनके विविध क्षेत्रोंमें सफल होनेके लिए आवश्यक 'प्रभावी' एवं 'आदर्श' व्यक्तित्व विकसित करने हेतु स्वभावदोष-निर्मूलनके साथ ही गुण-संवर्धनके लिए भी प्रयास करना आवश्यक है । गुण-संवर्धन प्रक्रिया का महत्त्व, उससे होनेवाले लाभ, इस प्रक्रियाके विविध चरणोंमें किए जानेवाले प्रयत्न इत्यादि सूत्रोंके विषयमें विस्तृत जानकारी इस ग्रन्थके 'अध्याय २ - गुण-संवर्धन प्रक्रिया'में दी है ।

इस ग्रन्थका अध्ययन कर, पाठक स्वभावदोष-निर्मूलन एवं गुण-संवर्धन हेतु प्रयास कर, जीवन सुखमय बनाएं तथा धर्माचरण कर, राष्ट्रके सर्वांगीण उत्कर्ष हेतु सक्रिय बनें, यही श्रीगुरुचरणोंमें प्रार्थना ! - **संकलनकर्ता**

सनातनके ग्रन्थोंमें उपयोग की गई संस्कृतनिष्ठ हिन्दी भाषाकी कारणमीमांसा

१. सनातनके ग्रन्थोंमें शुद्ध (संस्कृतनिष्ठ) हिन्दीका उपयोग किया जाता है। पाठकोंकी सुविधाके लिए कठिन शब्दोंके आगे कोष्ठकमें वैकल्पिक अन्य भाषाके शब्दका उल्लेख किया जाता है।

२. हिन्दी राष्ट्रभाषा होनेके कारण विविध प्रान्तोंमें एक ही अर्थमें एक से अधिक शब्द प्रचलित होते हैं। अनेक बार शब्दकी वर्तनीमें अंतर होता है। इन कारणोंसे पाठकोंको भाषा कठिन अथवा अशुद्ध प्रतीत न हो, इस हेतु ग्रन्थमें विभिन्न स्थानोंपर हमने कोष्ठकमें वैकल्पिक शब्द देनेका प्रयास किया है; तथापि पृष्ठसंख्या बढनेके भयसे प्रत्येक बार ऐसा करना सम्भव नहीं।

- (सच्चिदानंद परब्रह्म) डॉ. जयंत आठवले